Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 SHISRRJ | Volume 2 | Issue 5 | ISSN : 2581- 6306

जाति व्यवस्था और आरक्षण

डॉ शशि शेखर दास
सहायक शिक्षक, दर्शनशास्त्र विभाग, एस. पी. कॉलेज, दुमका।

शोधसारांश:- आरक्षण के माध्यम से मुफ्त में पाने की प्रवृत्ति भी लोगों में बढ़ रही है। मैं मानता हूं कि जरूरतमंदों को आरक्षण की आवश्यकता है किंतु वे जरूरतमंद केवल निम्न जाति में ही नहीं है। हां इतना जरूर कहा जा सकता है कि उनमें जरूरतमंदों की संख्या ज्यादा है। जिस प्रकार अमीर गरीब की खाई को पाटने के लिए आरक्षण की आवश्यकता हमें दिखाई पड़ते हैं उसी प्रकार ऊंच-नीच की मानसिक खाई को पाटने के लिए समानता का भाव लाना भी जरूरी है ऐसे में यदि हम जाति को खत्म करके वर्ण व्यवस्था को लाते हैं तो यह शास्त्रीय भी होगा और ऊंच-नीच का भेद भी समाप्त हो जाएगा साथ ही आरक्षण जातिगत ना होकर आवश्यकतानुसार लोगों को मिल पाएगा। यदि इस से भी ऊपर उठकर विचार किया जाए तो भगवत गीता कहती है कि यह जीव और जगत मेरा ही अंश है इस रिश्ते से सभी भाई-भाई हुए ,कोई पराया है ही नहीं ऐसे में जो आर्थिक रूप से संपन्न है वे सभी जो आर्थिक जरूरतमंद है उन्हें अपना भाई समझ कर बिना किसी प्रचार के सेवा करेंगे तो यह समस्या समाप्त हो सकती हैं।

मुख्य शब्द: – आरक्षण, जाति, आर्थिक मानसिक, गरीब, मुफ्त।

इस जगत में सर्वत्र चैतन्य भरा हुआ है,आज हम जिस परिवेश में जी रहे हैं,हमें सभी चीजों को पारदर्शी तरीके से पुन: विचार करने की आवश्यकता है। यह विज्ञान वादी युग है ,आज के इस युग में किसी को भी भावनात्मक तरीके से या लच्छेदार बातों से बहलाया या मनवाया नहीं जा सकता है, इस विज्ञान वादी युग में हर बात को विज्ञान के दृष्टिकोण से खरा उतरना होगा। यह नैतिक दृष्टि से भी जरूरी है क्योंकि न्याय पूर्ण व्यवस्था ही हमारे देश में शांति स्थापित कर सकती है और हमारे देश का चहुमुखी विकास हो सकता है। केवल यदि हम अपने बारे में सोचें, व्यक्तिगत स्वार्थ को बढ़ावा दें, कौम के स्वार्थ को बढ़ावा दें,केवल एक समूह का विकास देखें और दूसरों को अनदेखा करें तो यह भावना हमारे देश में कटुता पैदा करेगा साथ ही विकास में भी बाधा पहुंचाएगा,इसलिए इन भावनाओं से ऊपर उठकर सर्वेत्र सुखिन: संतु सर्वे संतु निरामया की भावना से हमें समाज की सेवा करनी चाहिए। कुछ दिन पहले यह बात बहुत जोरों पर थे के जाति किसने बनाई? श्री मोहन भागवत जी के बयान ने पूरे देश में हलचल पैदा कर दी । हर कोई इस बात से पल्ला झाड़ रहे थे कि जाति मैंने बनाई। इस बात से ऐसा प्रतीत होता है कि सबों को यह लगता है कि जाति गलत है इसलिए इसे बनाने की जिम्मेवारी कोई भी अपने माथे नहीं लेना चाहते। अब सवाल यह होता है कि यदि जाति गलत है और हमारे विद्वान पंडितों ने भी इसे नहीं बनाया तो फिर इसे हम समाज से हटा क्यों नहीं देते, हम इसी को अपने जीवन व्यवहार में क्यों शामिल किए हुए हैं ,इतना ही नहीं यदि जाति समाज में कैंसर की तरह घुस ही गया है तो इसका समुचित इलाज किए बिना हम इसे कट्टरता के साथ क्यों अपनाए हुए हैं, इसके प्रति हमारे विद्वान पंडित खामोश क्यों हैं? यदि जाति सही है तो इसे स्वीकार करने की भी हिम्मत रखनी चाहिए और गर्व से

सीना ठोक कर कहना चाहिए कि हां इसे हमने बनाया और यदि गलत है तो शास्त्रों के अनुसार अनुकूल क्या है उस बात को समाज के सामने अस्पष्टत: रखनी चाहिए । कभी–कभी हम देखते हैं कि घर को काफी दिनों से बंद रखा जाए तो भी अपने आप उसके अंदर धूल–गर्दे चले आते हैं,यदि उस प्रकार से जातियां समाज में आई होगी तो उसकी सफाई भी करना जरूरी है। वर्ण व्यवस्था को समझना यहां पर अति आवश्यक है क्योंकि वास्तविकता तो वर्ण व्यवस्था ही है जाति व्यवस्था तो केवल साइड इफेक्ट है,या यूं कहें यह पीछे का दरवाजा है,सामने के दरवाजे में वर्ण व्यवस्था है जिसमें दुनिया को यह दिखाई पड़ता है कि हमारे देश की संस्कृति कितनी उन्नत है, कितनी उच्च कोटि की है जहां पर कर्म के आधार पर वर्ण का विभाजन किया गया है किंतु समाज में पीछे के दरवाजे से जाति व्यवस्था को लागू किया गया है और वही कठोर तरीके से लागू भी है। भगवत गीता के चौथे अध्याय में कहा गया है कि चारों वर्णों के विभाजन मैंने गुण और कर्म के आधार पर किया है। भगवत गीता के 18 वेंअध्याय में योगेश्वर कृष्ण ने इसकी विस्तृत व्याख्या की है। उन्होंने ब्राह्मण के लिए कहा है कि इंद्रियों तथा मन को संयमित रखना, तपस्वी होना(निश्चित दे की प्राप्ति के लिए सुख दुख सहन करना तक है), पवित्रता (मन वचन और कर्म से पवित्र होना) होना, ज्ञानी होना(सत्य का ज्ञान होना), विशेष ज्ञान रखने वाला होना, अर्थात वैज्ञानिक दृष्टिकोण का होना, आस्तिक होना यह ब्रह्मणों का स्वाभाविक गुण कर्म है। जिनके स्वभाव में ऐसे गुण कर्म हो, जो इनके पालन करने में सक्षम हो वह ब्राह्मण है। यहां पर अस्पष्टत: भगवद्गीता कहती है की मैंने गुण कर्म के आधार पर वर्णों को बांटा है न की जन्म के आधार पर । फिर क्षत्रिय के बारे में भगवत गीता कहती है कि जिसके अंदर शौर्य है, तेज है, धैर्य है, दक्षता है, जो युद्ध से पलायन करने वाला नहीं है, जो दानी है, जो ईश्वर में भाव रखने वाला है, ऐसे स्वभाव युक्त मानव क्षत्रिय कहलाएंगे। वैश्य के लिए कहा गया है कि जिनके स्वभाव में खेती करना व्यापार करना है वह वैश्य वर्ण में आएंगे। शुद्र के बारे में कहा गया है कि उपर्युक्त तीनों वर्णों की सेवा करना शूद्र का स्वाभाविक गुण कर्म है। तीनों वर्णों की सेवा करने का अर्थ है की समाज की सेवा करना अर्थात समाज को जरूरी वस्तुएं प्रदान करना। एक सुई से लेकर हवाई जहाज तक का निर्माण करना शूद्र का स्वाभाविक गुण कर्म है। भगवत गीता के इन सभी श्लोकों में स्वभावजम शब्द का प्रयोग हुआ है,अर्थात जिनके स्वभाव में जैसे गुण हैं वैसे ही उनको कर्म का चुनाव करना चाहिए। आज तो बच्चों को उनके अभिभावक यह दबाव बनाते हैं कि तुम्हें अमुक पदाधिकारी बनना है, इसमें वे बच्चे की राय जानने की कोशिश नहीं करते, उसके स्वभाव को समझने की कोशिश नहीं करते, ऐसे में कभी–कभी बच्चे तनाव में आकर खुदकुशी तक कर लेते हैं। यदि अपने स्वभाव के अनुकूल कर्म को चुनते हैं तो उन्हें काम करना आसान तो लगता ही है साथ ही उस काम को करने में मन भी लगता है। स्वभाव के प्रतिकूल काम को चुनने में लोगों को उबाव महसूस होता है। ऐसी परिस्थिति में काम कम और खानापूर्ति ज्यादा होते हैं। एक ही परिवार के हर सदस्य का स्वभाव अलग होता है, इसलिए शास्त्र भी उन्हें अपने स्वभाव के अनुकूल काम को चुनने का अधिकार प्रदान करती है। श्रीमद्भागवत गीता कहती है कि अपनी कार्यकुशलता को भगवान के चरणों में समर्पण करना चाहिए अर्थात समाज के कल्याण के लिए, समाज के विकास के लिए अपनी कार्यकुशलता को लगाना चाहिए। जब तक व्यक्ति का कर्म उसके स्वभाव के अनुकूल ना हो तब तक उसके हुनर में उसकी कार्यकुशलता में निखार नहीं आ सकता है, इसलिए भगवत गीता कहती है कि अपनी कार्यकुशलता को भगवान के चरणों में अर्पण करो। यदि एकलव्य में तीर चलाने की कार्य कुशलता है तो उस कार्यकुशलता को देश के विकास के उपयोग में लाना चाहिए। एक ही परिवार में कोई बलिष्ट होते हैं, तो कोई बुद्धिमान होते हैं, कोई न्याय प्रिय होते हैं, तो कोई सबका ख्याल रखने वाले होते हैं इस प्रकार सभी के स्वभाव अलग होते हैं और इस कारण से अलग–अलग स्वभाव होने के कारण सबों को अपने अपने स्वभाव के अनुकूल कर्म का चुनाव करना चाहिए, इस प्रकार एक ही परिवार में अलग–अलग वर्ण

के लोग हो जाएंगे। इस तरह यदि शास्त्रों का गहन विचारों को पारदर्शी तरीके से अध्ययन किया जाए तो हमें सारी समस्याओं का समाधान मिल जाएगा। अपनी संस्कृति के प्रति अज्ञानता भी महापाप है। केवल हृदय को बड़ा करने की जरूरत है, अपने भीतर के विकृत मानसिकता को दूर हटा कर यथार्थ में वसुधैव कुटुंबकम की परिकल्पना को सहकारिता करना होगा। यदि हम शास्त्रों का गलत तरीके से व्याख्या करेंगे और जो कार्यकुशलता स्वभावजन्य होता है, उसे हम पूरे कॉम के लिए निश्चित कर देंगे, और यह दबाव बनाएंगे की इसी कर्म को करना आप सबों का स्वधर्म है तो यह वास्तव में शास्त्र के अनुकूल नहीं होगा,क्योंकि स्वभाव के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति की कार्यकुशलता अलग-अलग होती है उसे एक समूह से नहीं जोड़ा जा सकता बल्कि पूरे देश से उस स्वभाव के अनुरूप और उस कार्यकुशलता में निपुण व्यक्ति उस समूह से जुड़ेंगे तो कार्य में प्रगति होगी। इसी प्रकार एक ही स्वभाव के अनुकूल जोड़ी यदि परिणय सूत्र में बंधते हैं तो वह योग ज्यादा सफल होगा। जिस इंसान में स्वभाव से ही ज्ञान के प्रति रुझान है साथ ही वह ब्रह्म का कार्य करने वाला है किंतु हमने जातियां बांट रखी है इस कारण से वह जातिगत पिंजरे के बंधन में पड़ जाता है और अपने कार्यकुशलता को सही उड़ान और गति नहीं दे पाता, इतना ही नहीं उसे जीवनसाथी भी अपने स्वभाव के विपरीत किंतु जन्म के आधार पर ढूंढता है,अब दोनों का जन्म तो एक ही जाति में हुआ होता है किंतु दोनों का स्वभाव अलग होता है फिर वह रिश्ता योग्य नहीं होता।इस प्रकार हम कह सकते हैं कि जातिवाद शास्त्रीय नहीं है हमने जबरदस्ती इसे बना दिया है और लोगों में थोप दिया है जिसके परिणाम स्वरूप हमारे देश का समुचित विकास नहीं हो सका और हम आपस में ही, मानव- मानव में ही एक दूसरे को छोटा बड़ा समझने लगे, हमारे देश में कटुता पैदा हो गई,मानव जन्म से महान और कनिष्ठ होने लगा,कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति इसे शास्त्रीय नहीं कह सकता।हर इंसान को समान समझना, यही धर्म है। सभी ईश्वर के अंश हैं, सभी ब्रह्म के रूप हैं ऐसी भावना जब समाज में विकसित होगी तो जातिवाद की समस्या खत्म हो सकती है, और जब जाति ही नहीं रहेगी तो आरक्षण की समस्या अपने आप खत्म हो जाएगी। आज देश में आरक्षण और जातिवाद दोनों नासूर बने हुए हैं और देश के विकास में बाधक बन रहे हैं।जाति को बनाए रखने में दोनों वर्गों का स्वार्थ छिपा हुआ है। एक वर्ग बिना कुछ किए ही दूसरों से श्रेष्ठ होना चाहता है और दूसरा वर्ग आरक्षण का फायदा लेना चाहता है और विराम यह दोनों ही वर्ग जाति को बनाए रखना चाहते हैं दोनों का अपना-अपना लाभ है। एक बार जाता है कि जाति बनी रहे किंतु आरक्षण खत्म हो जाए। दूसरा वर्ग का मानना है कि जन्म से ही उस वर्ग के साथ भेदभाव किया जाता है,उसे हर कदम पर भेदभाव का सामना करना पड़ता है जिसके कारण वह समाज में काफी पीछे चला गया है और उसे आरक्षण की जरूरत है। वह आर्थिक के साथ-साथ मानसिक रूप से भी प्रताड़ित होता है इसलिए आरक्षण की जरूरत समझता है। यदि दोनों वर्गों के स्वार्थ को खत्म कर दिया जाए और परमार्थ का रास्ता अपनाया जाए, शास्त्र जो वास्तव में कहते हैं कि मानव में ईश्वर का वास है तो मानव मानव में भेद कैसा? जब श्रीमद् आदि शंकराचार्य अहम् ब्रह्मास्मि की गर्जना करते हैं तो यह संदेश देते हैं कि मैं ब्रह्म हूं, पारमार्थिक दृष्टि से केवल ब्रह्म ही सत्य है बाकी सब मिथ्या है। जब हर इंसान में ब्रह्म है तब कौन छोटा और कौन बड़ा? भगवत गीता में एक बहुत ही सुंदर श्लोक है कि मैं सबके हृदय में बैठा हुआ हूं, साथ ही तुम जो चार प्रकार से अन्न खाते हो, चबाकर, चाटकर, चूसकर और पीकर उसे मैं पचाता हूं । जब भगवान हृदय में बैठे हैं तब कोई इंसान अछूत कैसे हो सकता है। जहां पर भगवान का वास होता है वह स्थान तो मंदिर हो जाता है तब जब भगवान सबके हृदय में बैठे हो तो सब इंसान का शरीर भी एक मंदिर हो गया फिर वह मंदिर अपवित्र कैसे हो सकता है? ईश्वर अपने अस्तित्व अथवा गुणों के लिए किसी अन्य सत्ता पर निर्भर नहीं है । यदि हम किसी इंसान को अछूत कहते हैं, छोटा समझते हैं तब क्या उस इंसान के भीतर बैठे हुए भगवान का हम अपमान नहीं करते? मानव 8400000 योनियों में भगवान की सर्वोत्तम कृति है इसलिए यदि हम मानव को

अछूत, नीच, हीन समझेंगे तो हम ईश्वर का अपमान करेंगे।प्रत्येक राज्य की प्रगति के लिए शिक्षा अत्यंत आवश्यक है। जिस राज्य के निवासी शिक्षक नहीं होते तो वह राज्य प्रगति नहीं कर सकता। जॉन स्टूअर्ट मिल ने बड़े स्पष्ट शब्दों में लिखा है,"अच्छी सरकार का मुख्य कार्य व्यक्तियों के गुणों और योग्यताओं का विकास करना है।" धर्म के वास्तविक स्वरूप को हमें समझना होगा,थोड़े से स्वार्थ के कारण हमने धर्म के वास्तविक अर्थ को अनर्थ कर रखा है और समाज को आपस में बांट दिया है। जो सिखाया जाता है उसे शिक्षा कहते हैं और जो उठाया जाता है उसे संस्कार कहते हैं। हमें अपने स्वार्थ से ऊपर उठना होगा, वसुधैव कुटुंबकम की परिकल्पना को पूर्वाग्रह से बाहर निकलकर, पारदर्शी होकर साकारित करना होगा अभी हमारे देश का और संपूर्ण विश्व का विकास संभव है।सत्य ज्ञान का एकमात्र साधन अंतर्दृष्टि है। भारतीय-संस्कृति की समाज-रचना वर्णाश्रम-व्यवस्था पर हुई है। भारतीय- संस्कृति के अनुसार समाज चार वर्णों का बना है।यह व्यवस्था वर्ण के अनुसार है जाति के अनुसार नहीं।राजा परिस्थिति का निर्माण करता है इसलिएआज जो चुनकर सत्ता में आते हैं उन्हें जातिवादी राजनीति से ऊपर उठकर लोक कल्याण के अनुरूप कार्य करना चाहिए। हमें वैसे कार्य करने चाहिए जिससे हमारा आत्मा संतुष्ट हो। डेकार्ट कहते हैं कि हम सोचते हैं इसलिए सोचने वाला कोई चेतन पदार्थ अर्थात आत्मा या मन अवश्य ही सत्य होगा। भगवत गीता भी आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार करते हैं। मानव को ऐसा जीवन जीना चाहिए जो भगवान को अच्छा लगे। मानव- जीवन इस जगत के अत्यंत अमूल्य वस्तु हैं, भगवान के मानव के लिए बहुमूल्य देन है। मानव को मानवीय मूल्यों को अपने जीवन में लानी चाहिए। हमारा स्वार्थ हमारे कर्तव्य से ऊपर नहीं होना चाहिए, खासकर जिस धर्म के द्वारा हमें संपूर्ण मानव जाति को मार्गदर्शन करना होता है, उन्हें सन्मार्ग दिखाना होता है, यदि स्वार्थ वश हम उसकी परिभाषा अपने अनुकूल निकालते हैं तो यह जगत के साथ, अपने साथ और ईश्वर के साथ अन्याय करते हैं। लोग बहुत विश्वास के साथ धर्म को अपनाते हैं ऐसे में सबको मार्गदर्शन करने वाला धर्म में ही धूल लगे हो तो लोगों को सन्मार्ग कौन दिखाएगा? इसी प्रकार आरक्षण के माध्यम से मुफ्त में पाने की प्रवृत्ति भी लोगों में बढ़ रही है। मैं मानता हूं कि जरूरतमंदों को आरक्षण की आवश्यकता है किंतु वे जरूरतमंद केवल निम्न जाति में ही नहीं है। हां इतना जरूर कहा जा सकता है कि उनमें जरूरतमंदों की संख्या ज्यादा है। जिस प्रकार अमीर गरीब की खाई को पाटने के लिए आरक्षण की आवश्यकता हमें दिखाई पड़ते हैं उसी प्रकार ऊंच-नीच की मानसिक खाई को पाटने के लिए समानता का भाव लाना भी जरूरी है ऐसे में यदि हम जाति को खत्म करके वर्ण व्यवस्था को लाते हैं तो यह शास्त्रीय भी होगा और ऊंच-नीच का भेद भी समाप्त हो जाएगा साथ ही आरक्षण जातिगत ना होकर आवश्यकतानुसार लोगों को मिल पाएगा। यदि इस से भी ऊपर उठकर विचार किया जाए तो भगवत गीता कहती है कि यह जीव और जगत मेरा ही अंश है इस रिश्ते से सभी भाई-भाई हुए ,कोई पराया है ही नहीं ऐसे में जो आर्थिक रूप से संपन्न है वे सभी जो आर्थिक जरूरतमंद है उन्हें अपना भाई समझ कर बिना किसी प्रचार के सेवा करेंगे तो यह समस्या समाप्त हो सकती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1.श्री कृष्ण जीवन दर्शन-सद्विचार दर्शन, निर्मल निकेतन, पृष्ठ 12
2.श्री कृष्ण अष्टकम, सद्विचार दर्शन, निर्मल निकेतन- भाव वंदना
3. व्यास विचार, सद्विचार दर्शन, निर्मल निकेतन, पृष्ठ 3
4. जीवन तीर्थ, सद्विचार दर्शन, निर्मल निकेतन, पृष्ठ 151

5.इशावास्यम, सद्विचार दर्शन निर्मल निकेतन, पृष्ठ 12
6. धर्म–दर्शन, जॉन हिक ,प्रेंटिस–हॉल ऑफ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली, पृष्ठ 8
7. समकालीन भारतीय दर्शन, बसंत कुमार लाल, मोतीलाल बनारसीदास, 373
8. समाज दर्शन, डॉ जगदीश नारायण शुक्ल,,प्रकाशन केंद्र, लखनऊ, पृष्ठ 104
9. दर्शनशास्त्र की रूपरेखा,शुक्ला बुक डिपो, पटना, पृष्ठ 41
10. भारतीयों का आदर सांस्कृतिक जीवन, सद्विचार दर्शन, निर्मल निकेतन, पृष्ठ 45